भूमंडलीकरण का दौर और बिहार के ग्रामीण विकास में सहकारी संस्थाओं एवं स्वयं सहायता समूहों की भूमिका का ऐतिहासिक मूल्यांकन।

मो तौकीर हाशमी[1], डॉ इम्तियाज़ अंजुम[2]

[1]सहायक प्राचार्य (इतिहास), एच.पी.एस. कॉलेज, निर्मली, सुपौल (बिहार)

विभागाध्यक्ष, स्नातकोत्तर इतिहास विभाग, भू.ना.मंडल विश्वविद्यालय, मधेपुरा (बिहार)

शोध सारांश.. 1990 के दशक में भारत में लागू आर्थिक उदारीकरण, निजीकरण और भूमंडलीकरण की नीति ने ग्रामीण विकास की अवधारणा और संरचना में बहुआयामी बदलाव किए। बिहार जैसे कृषि प्रधान और सामाजिक–आर्थिक रुप से कमजोर राज्य में इन नीतिगत परिवर्तनों का प्रभाव स्पष्ठ रुप से दिखता है। स्वतंत्रता के बाद पंचवर्षीय योजनाओं के माध्यम से सहकारिता को कृषि, दुग्ध और उर्वरक क्षेत्रों में मजबूत किया गया। बिहार में भी ये संस्थाएं ग्रामीण ऋण, विपणन और प्रसंस्करण में सहायक रहीं। लेकिन भूमंडलीकरण के दौर में सरकारी हस्तक्षेप, कुप्रबंधन, और निजी क्षेत्र की प्रतिस्पर्द्धा से ये संस्थाएं कमजोर पड़ी। 1991 के बाद स्वयं सहायता समूह आधारित संस्थागत ढांचे वित्तीय समावेशन, ग्रामीण आजीविका, महिला सशक्तिकरण और समाजिक पूंजी के निर्माण में सक्रिय रही हैं। इस शोध–पत्र के माध्यम से भूमंडलीकरण के परिप्रेक्ष्य में बिहार ग्रामीण विकास में सहकारी संस्थाओं तथा स्वयं सहायता समूहों (SHGs) की भूमिका का ऐतिहासिक मूल्यांकन करना है साथ ही इन संस्थाओं की संरचनात्मक सीमाओं और समकालीन चुनौतियों पर भी विचार किया जाना है।

कूट शब्द : ग्रामीण विकास, सहकारिता, स्वयं सहायता समूह, PACS , जीविका, भूमंडलीकरण।

प्रस्तावना

ग्रामीण विकास को किसी भी विकासशील समाज के लिए समावेशी प्रगति का मूल आधार माना जाता है। भारत में औपनिवेशिक काल की नीतियों ने भू–राजस्व व्यवस्था, कृषि, आधारभुत ढांचा और समाजिक संरचना में जो बदलाव किए, उसका प्रभाव ग्रामीण विकास की प्रगति पर पड़ता रहा। भारत में जो "समृद्धि और गरीबी का विरोधाभास" दिखता है, उसकी जड़ें औपनिवेशिक काल में ही हैं। भौगोलिक स्थिति, वैश्विक संपर्क और साम्राज्यवादी नीतियों ने कुछ समूहों को लाभ पहुंचाया जबकि कई क्षेत्रों में गरीबी और पिछड़ापन बढ़ा।[1] स्वतंत्रता के बाद भारत ने ग्रामीण क्षेत्रों के सामाजिक–आर्थिक उत्थान हेतु जिस योजनाबद्ध विकास मॉडल को अपनाया, उसमें राज्यों की भूमिका केन्द्र में रही। किंतु 1991 के बाद लागू आर्थिक सुधारों ने विकास की प्रक्रिया में जिस बाजार–उन्मुख नीतियों को प्रमुखता प्रदान किया, उसके बाद ग्रामीण अर्थव्यवस्था और संस्थागत ढांचे में गहरे परिवर्तन देखने को मिले।[2]

बिहार की ग्रामीण अर्थव्यवस्था ऐतिहासिक रुप से कृषि, श्रम–प्रधान गतिविधि और पारंपरिक सामाजिक संबंधों पर आधारित रही है। भूमि का असमान वितरण, गरीबी, सीमित औद्योगिक विकास तथा समाजिक पिछड़ापन ने यहां ग्रामीण विकास को जटिल बना दिया है। 2000 में बिहार के विभाजन के बाद अधिकांश खनिज संसाधन (कोयला, लोहा आदि), भारी उद्योग (स्टील, माइनिंग) और राजस्व का बड़ा हिस्सा नए राज्य झारखंड में चले जाने से भी आर्थिक दबाव बढ़ा। ऐसी परिस्थिति में सहकारी संस्थाएं एवं स्वयं सहायता समूह न केवल आर्थिक सहायता के साधन बने बल्कि समाजिक सहभागिता और सामूहिक सशक्तिकरण के प्रभावी उपकरण के रुप में भी उभरे।[3]

भूमंडलीकरण और ग्रामीण विकास के वैचारिक आयाम

भूमंडलीकरण को समान्यतः पूंजी, तकनीक, श्रम और बाजार के अंतर्राष्ट्रीय एकीकरण की प्रक्रिया के रुप में देखा जाता है। इसमें विश्व के अलग–अलग देश परस्पर एक दूसरे के साथ जुड़ते हैं और उनके बीच सामाजिक, आर्थिक एवं सांस्कृतिक एकीकरण के साथ–साथ निर्भरता बढ़ती है। इसमें पूरा विश्व विज्ञान–प्रौद्योगिकी, संचार, व्यापार तथा सांस्कृतिक आदान–प्रदान के माध्यम से एक "वैश्विक गांव" की तरह कार्य करता है। ग्रामीण विकास का तात्पर्य ग्रामीण क्षेत्रों में आर्थिक संवृद्धि, गरीबी उन्मूलन, आधारभुत ढांचे का विकास और सतत जीवन शैली से है। दोनों के बीच जो वैचारिक आयाम है, वह अलग–अलग विचारधाराओं से प्रभावित है जो भूमंडलीकरण को ग्रामीण विकास के लिए अवसर या चुनौती के रुप में देखता है।

नव–उदारवादी विचारधाराः– इस विचारधारा के अनुसार भूमंडलीकरण मुक्त बाजार, निजीकरण, व्यापार उदारीकरण, और न्युनतम सरकारी हस्तक्षेप पर जोर देता है। यह ग्रामीण विकास के लिए अवसर प्रदान करता है जिसमें कृषि के व्यवसायीकरण को बढ़ावा मिलता है। उन्नत प्रौद्योगिकी, निवेश और वैश्विक बाजार तक पहुंच बढने से कृषि उत्पादन और उत्पादक्ता का लाभ ग्रामीण क्षेत्र को मिलता है जिससे आय में वृद्धि होती है।[4] लेकिन देखा जाए तो इस विचारधारा में मुख्य लाभ कॉर्पोरेट जगत को ही प्राप्त है जबकि छोटे और सीमांत किसानों में आय अस्थिरता की समस्या बनी रहती है।

1. राय, तीर्थंकर : द इकोनॉमिक हिस्ट्री ऑफ इंडिया 1857–2010, ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, नई दिल्ली, 2011
2. चंद्र, विपिन एवं अन्य : आजादी के बाद भारत, नई दिल्ली, 2008
3. गुहा, रणजीत : सबाल्टर्न स्टडीज, ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, नई दिल्ली, 1997
4. रियर्डन, टी. एवं टीमर, सी.पी. : ट्रास्फॉर्मेशन ऑफ मार्केट फॉर एग्रीकल्चरल आउटपुट इन डेवलपिंग कंट्रीज सिंस 1950, (2005)

संरचनावादी और निर्भरता सिद्धांतः– यह सिद्धांत भूमंडलीकरण को विकासशील देशों के शोषण के रुप में देखती है। यह ग्रामीण क्षेत्रों में रोजगार की कमी, सार्वजनिक सेवाओं में कटौती, पर्यावरणीय निम्नीकरण और असमानता को बढ़ावा देता है। यह वैश्विक पूंजीवादी अमीर देशों को लाभ पहुंचाता है जबकि गरीब देशों को निर्भर बनाता है।[5]

स्थानीयतावाद और सतत विकास विचारधाराः– यह विचारधारा भूमंडलीकरण को ग्रामीण आत्मनिर्भरता के विरुद्ध देखता है लेकिन अवसर को भी स्वीकारता है। भूमंडलीकरण कुछ ग्रामीण समुदायों के लिए उद्यमिता के अवसर उपलब्ध कराता है, लेकिन सांस्कृतिक ह्रास, Feminization of Poverty (गरीबी के मामले में महिलाओं का अनुपात पुरुषों की तुलना में अधिक बढना), पर्यावरणीय संकट की स्थिति भी उत्पन्न करता है। सतत विकास के लिए जैविक कृषि, स्थानीय ढांचे की मजबूती और खाद्य सुरक्षा पर ध्यान दिया जाना आवश्यक है।[6]

भारत में ग्रामीण विकास की वैकल्पिक अवधारणाएं स्थानीय संसाधनों के उपयोग, सामूहिक प्रयास और संस्थागत सहयोग पर बल देती है। सहकारिता और स्वयं सहायता समूह इसी वैचारिक आधार पर विकसित हुआ जिनका उद्देश्य भूमंडलीकरण से उत्पन्न असमानताओं को सामूहिक संगठन के माध्यम से संतुलित करना रहा है।[7]

बिहार में सहकारिता और स्वयं सहायता समूह का ऐतिहासिक विकास

बिहार में सहकारी आंदोलन की शुरुआत औपनिवेशिक काल में हुई जिसका मुख्य उद्देश्य किसानों को महाजनों और साहूकारों के शोषण से बचना था। Co-operative Credit Society Act 1904 ने औपचारिक रुप से इसकी नींव रखी जो मुख्य रुप से ग्रामीण ऋण प्रदान करने पर केन्द्रित था। बिहार में इसकी शुरुआत 1909 में रोहिका यूनियन ऑफ कोऑपरेटिव क्रेडिट सोसायटी लिमिटेड से हुई।[8] 1919 में भारत शासन अधिनियम के तहत सहकारिता को प्रांतीय विषय बना दिया गया, जिससे बिहार में स्थानीय स्तर पर विकास को बढावा मिला। 1935 में बिहार और उड़ीसा सहकारी सोसायटी अधिनियम–Vi पारित हुआ, जो सहकारी सोसायटियों के प्रबंधन और रजिस्ट्रार की शक्तियों को मजबूत करने वाला था।[9] 1936–37 में उड़ीसा के अलग होने के बाद बिहार राज्य सहकारी बैंक की स्थापना हुई जो पहले बिहार और उड़ीसा राज्य सहकारी बैंक के रुप में कार्यरत था।

स्वतंत्रता के बाद 1951–56 की पहली पंचवर्षीय योजना में सहकारिता को ग्रामीण विकास के लिए महत्वपूर्ण माना गया। 1956 में पटना में अखिल भारतीय सहकारी कांग्रेस आयोजित हुई जिसमें राज्य की भागीदारी को सीमित करने का निर्णय लिया गया। 1983 में दुग्ध सहकारी संघ (COMFED) की स्थापना हुई जो 'सुधा डेयरी' ब्रांड के अंतर्गत कार्य करता है और राज्य में दुग्ध उत्पादन को बढावा देता है।[10] 1996 में बिहार में समानांतर सहकारी विधान (Bihar self-supporting Co-operative Society Act, 1996) लागू किया गया जो स्वायत्त और लोकतांत्रिक सहकारिता को बढावा देता है। 1990 के आर्थिक सुधारों के दौर में सहकारी संस्थाओं को कई चुनौतियों का सामना करना पड़ा। सरकारी संरक्षण की कमी, राजनैतिक हस्तक्षेप, कमजोर प्रबंधन और वित्तीय अनुशासन की कमी ने इन संस्थाओं की प्रभावशीलता को हतोत्साहित किया है। इन सब के बावजूद कृषि साख समितियां (PACS), दुग्ध सहकारिता और विपणन सहकारी संस्था ग्रामीण अर्थव्यवस्था को स्थायित्व प्रदान करने में सहायक रही हैं।

स्वयं सहायता समूह आंदोलन भारत में 1980 के दशक में शुरु हुआ लेकिन बिहार में इसका तेजी से विकास 'जीविका' कार्यक्रम के साथ हुआ जो महिलाओं की सामाजिक–आर्थिक सशक्तिकरण पर केंद्रित है। स्वयं सहायता समूह मॉडल की विशेषता सामूहिक बचत, आंतरिक ऋण व्यवस्था और बैंक–लिंकिंग कार्यक्रम है। इस मॉडल ने ग्रामीण गरीबों को औपचारिक वित्तीय प्रणली से जोड़ते हुए आत्मनिर्भरता और सहभागिता की भावना को सुदृढ किया।[11]

बिहार ग्रामीण विकास में सहकारी संस्थाओं की भूमिका

बिहार एक कृषि प्रधान राज्य है, जहां अधिकांश जनसंख्या ग्रामीण क्षेत्र में रहती है। ग्रामीण विकास का संबंध कृषि उत्पादन वृद्धि, गरीबी उन्मूलन, रोजगार सृजन, महिला सशक्तिकरण तथा समाजिक न्याय से है। सहकारी संस्थाएं इस क्षेत्र में महत्वपूर्ण भूमिका निभा रही हैं जो लोगों को संगठित करके सस्ता ऋण, सामग्री वितरण, विपणन तथा प्रशिक्षण प्रदान करती है। 'सहकार से समृद्धि' के सिद्धांत पर ग्रामीण अर्थव्यवस्था मजबूत होती है।

– प्राथमिक कृषि साख समितियां (PACS) तथा बिहार राज्य सहकारी बैंक किसानों को समय–समय पर सस्ता ऋण उपलब्ध कराता है। इससे किसानों को फसल, बीज, खाद आदि के लिए अल्पकालिक ऋण प्राप्त होते हैं। बिहार राज्य फसल सहायता योजना, ब्याज सब्सिडी तथा KCC से किसानों की ऋण समस्या कम होती है तथा उत्पादन को बढावा मिलता है। PACS बहुउद्देश्यीय होते जा रहे हैं जो गोदाम, खरीद, विपणन, कस्टम हायरिंग तथा प्रधानमंत्री कृषि समृद्धि केंद्र के रुप में कार्य कर रही हैं। इससे उत्पादों के विरुद्ध बिचौलियों से छुटकारा मिलता है तथा बेहतर मूल्य प्राप्त होता है। बिहार में PACS को 25 से अधिक गतिविधियों (डेयरी, मत्स्य, CSC, जन औषधि आदि) के लिए सशक्त किया गया है।[12]

– बिहार के ग्रामीण अर्थव्यवस्था में डेयरी और मत्स्यपालन दो महत्वपूर्ण क्षेत्र हैं जो विशेष रुप से महिलाओं के सशक्तिकरण में बड़ी भूमिका निभाते हैं। ये सहकारी संस्थाओं के माध्यम से महिलाओं को रोजगार, आय वृद्धि तथा निर्णय लेने की शक्ति प्रदान करते हैं। COMFED (बिहार राज्य दुग्ध सहकारी संघ) के तहत 'सुधा ब्रांड' ने ग्रामीण महिलाओं को सशक्त बनाया है। महिलाएं स्वयं सहायता समूह से जुड़कर दूध संग्रह केंद्र चलाती हैं, जिससे उनकी आय 30–40 फीसदी बढ़ी है।[13]

5. ट्रेसी, एम. : डिपेंडेसी थ्योरी एंड द क्रिटिक ऑफ न्योडेवलपमेंटलिज्म इन लैटिन अमेरिका, 2022
6. भगवती, जगदीश : इन डिफेंस ऑफ ग्लोबलाइजेसन, ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, 2004
7. सेन, अमर्त्य : डेवलपमेंट एज फ्रीडम, ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, नई दिल्ली, 1999
8. www.cooperation.gov.in : दि कोऑपरेटिव मूवमेंट इन इंडिया – अ ब्रीफ हिस्ट्री
9. Bihar Co-operative Society Act 1935
10. COMFED official website: www.dairyknowledge.in
11. रमेश अरुणाचलम : दि जरनी ऑफ एस.एच.जी. इन इंडिया, नई दिल्ली, 2009
12. बिहार में सहकारी पुनर्गठन, PIB रिलीज, दिसम्बर 2025
13. Bihar women dairy farmers income increase 30% : MSC Report, Nov 2025

– Fish Farmer Producer Group (FFPG) द्वारा महिलाओं को गांव के तालाब 5 वर्ष के लिए मुफ्त दिए जाते हैं। ये महिलाओं को प्रशिक्षण, मछली बीज, फीड तथा बाजार लिंकेज उपलब्ध कराते हैं जिससे महिलाओं के आय में वृद्धि होती है और वे आर्थिक निर्णय लेने में सक्षम हो पाती हैं।

वैश्वीकरण के दौर में जब निजी बाजार की शक्तियां मजबूत हुई, तब सहकारी संस्थाएं छोटे किसानों के लिए सुरक्षा तंत्र के रुप में कार्य करती रही हैं। सहकारी ढांचा ग्रामीण समाज में सामूहिक निर्णय निर्माण और संसाधनों के न्यायसंगत वितरण को प्रोत्साहित करता है, जो दीर्घकालिक विकास के लिए आवश्यक माना जाता है।[14]

स्वयं सहायता समूह और ग्रामीण सशक्तिकरण

बिहार में स्वयं सहायता समूह (SHGs) का प्रभाव केवल आर्थिक क्षेत्र तक सीमित नहीं रहा बल्कि सामाजिक परिवर्तन की प्रक्रिया में भी उल्लेखनीय भूमिका निभा रही है। 'जीविका' जैसे कार्यक्रम ने स्वयं सहायता समूह के माध्यम से ग्रामीण महिलाओं को संगठित किया है जिससे महिलाएं पारिवारिक और सामुदायिक स्तर पर निर्णय–निर्माण हेतु सशक्त हुई हैं। यह महिलाओं का एक छोटा स्वैच्छिक समूह होता है जो नियमित बचत और आपसी सहयोग के आधार पर कार्य करता है।[15] जीविका के माध्यम से लाखों महिलाओं को बैंकों से कम ब्याज दर पर ऋण प्राप्त होता है जिसका उपयोग वे छोटे व्यवसाय शुरु करने में करती हैं। महिलाएं अब केवल खेती के काम तक ही सीमित नहीं रहीं बल्कि वे मुर्गी पालन, डेयरी, मत्स्यपालन, सिलाई और अगरबत्ती बनाने जैसे कुटीर उद्योग का भी संचालन कर रही हैं।[16]

आर्थिक गतिविधियों के साथ–साथ स्वयं सहायता समूह ने बिहार के समाजिक व्यवस्था में भी सकारात्मक बदलाव लाए हैं–

– समूह की बैठक में बच्चों के टीकाकरण, पोषण और शिक्षा पर चर्चा होती है जिससे ग्रामीण क्षेत्र में जागरुक्ता बढ़ी है।

– पंचायती राज संस्था में समूह से जुड़ी महिलाओं की भागीदारी बढ़ने से जमीनी स्तर पर स्थानीय प्रशासन मजबूत हुआ है।

– स्वयं सहायता समूह ने खेती के आधुनिक तरीकों को अपनाने में मदद किया है। महिलाएं अब 'कस्टम हायरिंग सेंटर' चला रही हैं, जहां से किसान आधुनिक कृषि उपकरण किराए पर ले सकते हैं।[17]

– पहले ये समूह केवल बचत और निवेश की प्रक्रिया तक ही सीमित थे लेकिन अब ये 'दीदी की रसोई (अस्पतालों में कैंटीन), मधु उत्पादन और सोलर पैनल जैसे तकनीकी क्षेत्रों में भी सक्रिय हैं।[18]

भूमंडलीकरण के दौर में ये स्वयं सहायता समूह ग्रामीण उत्पादों को वैश्विक बाजार से जोड़ने और तकनीकी नयापन को अपनाने में महत्वपूर्ण साबित हो रहे हैं।

– बिहार की महिलाएं स्थानीय हस्तशिल्प, जैसे कि– मधुबनी पेंटिंग, सिक्की कला, भागलपुरी सिल्क आदि सामग्री को अमेजन और फ्लिपकार्ट जैसे वैश्विक प्लेटफॉर्म पर बेच रही हैं।

– ये स्वयं सहायता समूह कच्चे माल की जगह प्रसंस्कृत खाद्य (Processed Food) तैयार कर रहे हैं। मखाना, लीची, कतरनी चावल जैसे उत्पादों की ब्रांडिंग और पैकेजिंग अंतर्राष्ट्रीय मानकों के अनुरुप की जा रही है, जिससे कि उनका निर्यात आसानी से किया जा सके।

– समूह की महिलाएं 'डिजिटल सखी' के रुप में कार्य कर रही हैं। वे अब स्मार्ट फोन और डिजिटल भुगतान (UPI) का उपयोग कर रही हैं जो उन्हें वैश्विक डिजिटल अर्थव्यवस्था से जोड़ता है।[19]

इस प्रकार देखा जाए तो भूमंडलीकरण ने जहां ग्रामीण उद्योगों के लिए कड़ी प्रतिस्पर्द्धा को जन्म दिया है तो वहीं दूसरी ओर इसने स्वयं सहायता समूह को Local to Global होने का अवसर भी प्रदान किया है।

सहकारिता एवं स्वयं सहायता समूह से जुड़ी चुनौतियां

बिहार में सहकारिता एवं स्वयं सहायता समूह ग्रामीण विकास के लिए एक प्रमुख व्यवस्था के रुप में मौजूद हैं। हालांकि अभी भी जमीनी स्तर पर इन से जुड़ी कई सारी चुनौतियां मौजूद हैं। सहकारी व्यवस्था के रुप में प्राथमिक कृषि साख समितियों (PACS) का नेटवर्क बहुत बड़ा है, लेकिन इसकी प्रभावशीलता में कई सारी बाधाएं हैं–

– अधिकांश सहकारी बैंक और समितियां NPA (Non-Performing Asset यानी जब किसी वित्तीय संस्था द्वारा दिए गए लोन की किस्त 90 या उससे अधिक दिन तक प्राप्त न हो।) और खराब रिकवरी रेट से ग्रसित हैं, जिससे किसानों को सही समय पर कर्ज नहीं मिल पाता।[20]

– अनाज भंडारण हेतु गोदाम और कोल्ड स्टोरेज की कमी होने से किसानों को अपनी उपज कम दामों पर बेचनी पड़ती है। इसके लिए सब्सिडी के माध्यम से सौर ऊर्जा पर चलने वाली मिनी कोल्ड स्टोरेज के निर्माण पर जोर दिया जा सकता है, जिससे कि किसानों के उपज को बर्बाद होने से बचाया जा सके और उन्हें उचित मूल्य की प्राप्ति हो सके।

– सदस्यों को सहकारी नियमों और आधुनिक कृषि तकनीकों की सही जानकारी नहीं होती, जिससे वे सक्रिय रुप से अपना योगदान नहीं दे पाते।

– सहकारी समितियां प्रायः स्थानीय राजनैतिक व्यवस्था का शिकार होती हैं जिससे इनमें पारदर्शिता का अभाव देखने को मिलता है और फंड्स का सही इस्तेमाल भी नहीं हो पाता है। इसके लिए समितियों के संचालन हेतु केवल राजनैतिक व्यवस्था ही नहीं बल्कि पेशेवर विशेषज्ञों की भी नियुक्ति की जा सकती है।

बिहार में जीविका परियोजना ने स्वयं सहायता समूह के रुप में भले ही लाखों महिलाओं को आर्थिक गतिविधियों से जोड़ रखा है, लेकिन इसकी सफलता में अभी भी कई सारी बाधाएं हैं–

– अधिकांश स्वयं सहायता समूह केवल ऋण लेने और चुकाने तक ही सीमित हैं। उनके पास उच्च मूल्य वाले उत्पाद (Value-added Products) को तैयार करने की तकनीकी कौशल की कमी है।[21]

14. कृष्णन, पीटर : कोऑपरेटिव एंड रुरल इकोनॉमी, नई दिल्ली, 2012
15. 'इम्पैक्ट ऑफ जीविका ऑन रुरल पॉवर्टी इन बिहार' : वर्ल्ड बैंक रिपोर्ट (2023)
16. स्टैटस ऑफ माइक्रोफाइनेंस इन इंडिया 2024–25 : NABARD
17. Official Guideline on Custom Hiring Centres (CHC) : ग्रामीण विकास विभाग, बिहार सरकार
18. Innovative Models of Rural Livelihood in Bihar : Journal of Rural Development, Vol 42
19. WEF Article : How women-led SHGs are driving digital inclusion in rural India.
20. Report on Rural Co-Operative Banking in Eastern India : RBI
21. World Bank Documents : Jeevika- Transforming rural Bihar through SHGs (Assessment of Challenges)

– ग्रामीण महिलाएं अपना समान तो बना लेती हैं लेकिन उन्हें बड़े शहरों के बाजारों या e-commerce प्लेटफॉर्म से जुड़ने में समस्या आती है। इससे बिचौलिए को मुनाफा कमाने का अवसर मिल जाता है।

– कई ऐसे समूह हैं जहां महिलाएं कर्ज तो लेती हैं लेकिन उसका निवेश किसी प्रोडक्टिव काम में नहीं लगा कर घरेलू खर्चे में कर देती हैं, जिससे वो ऋण जाल में उलझती जाती हैं।[22]

– डिजिटल लेन–देन और ऑनलाइन बैंकिंग के मामले में ग्रामीण महिलाएं अभी भी तकनीक के साथ ताल–मेल बैठाने में पिछड़ी हुई हैं। उपरोक्त के अलावा बिहार से पुरुषों का बड़े पैमाने पर पलायन होने के कारण सहकारी कार्यों का बोझ महिलाओं पर आ जाता है, जबकि अक्सर वे संपत्ति का अधिकार नहीं रखती। बिहार में हर साल आने वाली बाढ भी सहकारी समितियों और स्वयं सहायता समूह की आर्थिक गतिविधियों को पूरी तरह ठप कर देती हैं।

निष्कर्ष

प्रस्तुत अध्ययन से यह स्पष्ठ होता है कि बिहार के ग्रामीण विकास में सहकारिता एवं स्वयं सहायता समूह मात्र आर्थिक ही नहीं बल्कि सामाजिक परिवर्तन के भी साधन रहे हैं। भूमंडलीकरण के दौर में एक ओर वैश्विक अर्थव्यवस्था ने नई तकनीक और बाजार का द्वार खोला है वहीं इसने दूसरी तरफ ग्रामीण समाज के सामने अस्तित्व का संकट उत्पन्न किया है। इस संक्रमण की स्थिति में सहकारिता एवं स्वयं सहायता समूह ने आत्मनिर्भरता एवं समाजिक सहभागिता के माध्यम से ग्रामीण समाज को सशक्त बनाया है। COMFED ('सुधा ब्रांड') जैसी सहकारी संस्था ने यह साबित किया है कि यदि ग्रामीण किसान संगठित हों तो वे बहुराष्ट्रीय कंपनी की प्रतिस्पर्द्धा के बीच खड़े ही नहीं रह सकते बल्कि लाभ भी कमा सकते हैं। जीविका ने यह साबित किया है कि जहां पारंपरिक बैंकिंग व्यवस्था ग्रामीण गरीबों तक पहुंच बनाने में कमजोर रही हैं, वहीं स्वयं सहायता समूह ने समाजिक पूंजी को आर्थिक शक्तिमें बदल दिया। भविष्य में समावेशी और टीकाऊ ग्रामीण विकास के लिए इन संस्थाओं को और अधिक सुदृढ करने की आवश्यक्ता है।

22. Chapter on rural development and financial inclusion : Economic Survey of Bihar(2024-25)